ओ३म्

सत्यार्थ प्रकाश

की

व्यापकता ।

लेखक—

महेश प्रसाद,

मौलवी आलिम फ़ाज़िल,

प्रकाशक—

मैनेजर, आलिम फ़ाज़िल बुकडिपो,

लंका, बनारस सिटी ।

आर्य सम्वत्सर १९७२९४९०३९

दयानन्दाब्द ११४

सम्वत् १९९५ वि०

सन् १९३८ ई०

प्रथमावृति १००० एक हज़ार

दाम आना ।

नोट—डाक द्वारा एक प्रति मंगाने के लिये दो पैसे का टिकट अधिक भेजना चाहिये ।

भूमिका

श्री स्वामी दयानन्द जी कृत हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश पहले पहल सन् १८७५ ई० में छपा था और अब दिसम्बर सन् १९३८ ई० तक तीन लाख दो सौ छप चुका है। ६३ वर्षों के बीच में हिन्दी रामायण व गीता की पुस्तकें छपी हों तो छपी हों नहीं तो मैं जोरों के साथ कहता हूँ कि सत्यार्थ प्रकाश के सिवा अन्य कोई हिन्दी पुस्तक कदापि इतनी नहीं छपी है। मेरा ख्याल है कि हिन्दी प्रेमी यदि तनिक भी विचार करेंगे तो अवश्य मेरे कथन का अनुमोदन करेंगे किन्तु यह भी ज्ञात रहे कि मेरे विचार से अब तक दो बातें ऐसी हैं जो केवल सत्यार्थ प्रकाश के निमित्त ही हैं:—

(१) कोई अन्य पुस्तक किसी भी भाषा में ऐसी नहीं प्रतीत होती जो कि प्रकाशन के बाद पचास-साठ साल के भीतर ही इतनी संख्या में निकली हो।

(२) उक्त समय के भीतर ही उसके इतने अनुवाद निकले हों।

इस छोटी सी पुस्तक में सत्यार्थ प्रकाश के सम्बन्ध में बतलाया गया है कि:—

(१) इसमें क्या है ।

(२) इसे क्योंकर पढ़ना चाहिये ।

(३) यह कितना छपा ।

(४) कितना सस्ता है । इत्यादि

निदान इसके पढ़ने से अवश्य लाभ होगा ।

हिन्दू विश्वविद्यालय काशी
दिसम्बर १९३८ ई०

महेशप्रसाद
मौलवी आलिम फाजिल

ॐ

सत्यार्थ प्रकाश की व्यापकता

सत्यार्थ प्रकाश में क्या ?

सत्य क्या है ? असत्य क्या है ? किन बातों को मानना अथवा करना चाहिये । किन बातों को न करना अथवा मानना चाहिये । इस प्रकार की बातें 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखीं गई हैं। यही कारण है कि धार्मिक जगत में इस ग्रन्थ ने बड़ी खलबली पैदा कर दी है और इसके हिन्दी संस्करण का प्रकाशन भी विशेष रूप से बहुत ज्यादा हुआ है जैसा कि आगे चलकर विस्तारपूर्वक लिखा गया है और साथ ही साथ अनेक भाषाओं में इसके अनुवाद भी जैसी भारी संख्याओं में निकले हैं यह भी कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है। इस बात की आज बड़ी महत्ता है कि शिक्षा सीधे ढंग अथवा सम्वाद के रूप में हो । प्रश्न व उत्तर के द्वारा पठन-पाठन में सुगमता होती है । अब इस बात को गूढ़ दृष्टि से देखें तो मानना पड़ता है कि श्री स्वामी जी के समय में यद्यपि उक्त विधि का चलन न था तथापि प्रश्न व उत्तर के रूप में उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश (दूसरे संस्करण) को लिखा । जिससे लेखक की अपूर्व प्रतिभा का भी परिचय होता है ।

पूर्वार्द्ध

ऐसी अपूर्व पुस्तक 'पूर्वार्द्ध' व 'उत्तरार्द्ध' नामक दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में दस समुल्लास (भाग) हैं।

इनमें यह विषय हैं:—

(१) ईश्वर के ओंकारादि नामों की व्याख्या।

(२) सन्तानों की शिक्षा।

(३) ब्रह्मचर्य्य, पठन-पाठन-व्यवस्था, सत्यासत्य ग्रन्थों के नाम और पढ़ने पढ़ाने की रीति।

(४) विवाह और गृहाश्रम का व्यवहार।

(५) वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम की विधि।

(६) राजधर्म।

(७) वेदेश्वर विषय।

(८) जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय।

(९) विद्या, अविद्या, बन्ध और मोक्ष की व्याख्या।

(१०) आचार, अनाचार और भक्ष्याभक्ष्य-विषय।

अब उदाहरणार्थ कुछ बातें अनेक समुल्लासों से उद्धृत की जा रही हैं:—

(१)

ओ३म् शन्नो मित्रः आदि वेद का मन्त्र है। यह प्रथम समुल्लास के आरम्भ में ही है। अतः प्रथम समुल्लास जिसमें श्री स्वामी जी ने परमात्मा के नामों की व्याख्या की है उसमें ही इस मन्त्र के विषय में लिखा है:—

जो (शन्नो मित्रः शं व०) इस मन्त्र में मित्रादि नाम हैं

ने भी परमेश्वर के हैं क्योंकि स्तुति, प्रार्थना, उपासना श्रेष्ठ ही की की जाती है। श्रेष्ठ उसको कहते हैं जो गुण, कर्म्म, स्वभाव और सत्य सत्य व्यवहारों में सब से अधिक हो। उन सब श्रेष्ठों में भी जो अत्यन्त श्रेष्ठ उसको परमेश्वर कहते हैं। जिसके तुल्य कोई न हुआ, न है और न होगा। जब तुल्य नहीं तो उससे अधिक क्योंकर हो सकता है ? जैसे परमेश्वर के सत्य, न्याय दया, सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञत्वादि अनन्त गुण हैं वैसे अन्य किसी जड़ पदार्थ वा जीव के नहीं हैं जो पदार्थ सत्य है, उसके गुण, कर्म्म, स्वभाव भी सत्य होते हैं इसलिये मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर ही की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करें, उससे भिन्न की कभी न करें क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु, महादेव नामक पूर्वज महाशय विद्वान्, दैत्य, दानवादि निकृष्ट मनुष्य और अन्य साधारण मनुष्यों ने भी परमेश्वर ही में विश्वास करके उसी की स्तुति, प्रार्थना और उपासना की, उससे भिन्न की नहीं की। वैसे हम सब को करना योग्य है। इसका विशेष विचार मुक्ति और उपासना विषय में किया जायगा।

(प्रश्न) मित्रादि नामों से सखा और इन्द्रादि देवों के प्रसिद्ध व्यवहार देखने से उन्हीं का ग्रहण करना चाहिए।

(उत्तर) यहाँ उनका ग्रहण करना योग्य नहीं क्योंकि जो मनुष्य किसी का मित्र है वही अन्य का शत्रु और किसी से उदासीन भी देखने में आता है। इससे मुख्यार्थ में सखा आदि का ग्रहण नहीं हो सकता। किन्तु जैसा परमेश्वर सब जगत् का निश्चित मित्र, न किसी का शत्रु और न किसी से उदासीन है, इससे भिन्न कोई भी जीव इस प्रकार का कभी नहीं हो सकता।

इसलिये परमात्मा ही का ग्रहण यहां होता है। हां, गौण अर्थ में मित्रादि शब्द से सुहृदादि मनुष्यों का ग्रहण होता है।

(२)

दूसरे समुल्लास के आरम्भ में ही शिक्षा के विषय में यह शब्द है:—

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

यह शतपथ ब्राह्मण [का० १४ । ८ । ५ । २ ॥] का वचन है। वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान् होता है। वह कुल धन्य ! वह सन्तान बड़ा भाग्यवान् ! जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान् हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम [और] उनका हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता, इसलिये (मातृमान्) अर्थात् 'प्रशस्ता धार्मिकी माता विद्यते यस्य स मातृमान्।' धन्य वह माता है कि जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक सुशीलता का उपदेश करे ॥

(३)

पांचवें समुल्लास के प्रारम्भिक भाग में सन्यास ग्रहण करने के विषय में 'प्रश्न' व 'उत्तर' के रूप में श्री स्वामी जी के शब्द हैं:—

(प्रश्न) संन्यास ग्रहण की आवश्यकता क्या है ?

(उत्तर) जैसे शरीर में शिर की आवश्यकता वैसे ही आश्रमों में संन्यासाश्रम की आवश्यकता है क्योंकि इसके बिना

विद्या, धर्म कभी नहीं बढ़ सकता और दूसरे आश्रमों को विद्या-ग्रहण, गृहकृत्य और तपश्चर्यादि का सम्बन्ध होने से अवकाश बहुत कम मिलता है। पक्षपात छोड़ कर वर्त्तना दूसरे आश्रमों को दुष्कर है जैसा संन्यासी सर्वतोमुक्त होकर जगत् का उपकार करता है वैसा अन्य आश्रमी नहीं कर सकता, क्योंकि संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है उतना अन्य आश्रमी को नहीं मिल सकता। परन्तु जो ब्रह्मचर्य्य से संन्यासी होकर जगत् को सत्य शिक्षा करके जितनी उन्नति कर सकता है, उतनी गृहस्थ वा वानप्रस्थ आश्रम करके संन्यासाश्रमी नहीं कर सकता।

(प्रश्न) संन्यास ग्रहण करना ईश्वर के अभिप्राय से विरुद्ध है क्योंकि ईश्वर का अभिप्राय मनुष्यों की बढ़ती करने में है, जब गृहाश्रम नहीं करेगा तो उससे सन्तान ही न होंगे। जब संन्यासाश्रम ही मुख्य है और सब मनुष्य करें तो मनुष्यों का मूलच्छेदन हो जायगा ?

(उत्तर) अच्छा, विवाह करके भी बहुतों के सन्तान नहीं होती अथवा होकर शीघ्र नष्ट हो जाती हैं फिर वह भी ईश्वर के अभिप्राय से विरुद्ध करने वाला हुआ, जो तुम कहो कि "यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः" यह किसी कवि का वचन है, अर्थ—जो यत्न करने से भी कार्य्य सिद्ध न हो तो इसमें क्या दोष ? अर्थात् कोई भी नहीं। तो हम तुमसे पूछते हैं कि गृहाश्रम से बहुत सन्तान होकर आपस में विरुद्धाचरण कर लड़ मरें तो हानि कितनी बड़ी होती है, समझ के विरोध से लड़ाई बहुत होती है, जब संन्यासी एक वेदोक्तधर्म के उपदेश से परस्पर

प्रीति उत्पन्न करावेगा तो लाखों मनुष्यों को बचा देगा, सहस्रों गृहस्थ के समान मनुष्यों की बढ़ती करेगा और सब मनुष्य संन्यास ग्रहण कर ही नहीं सकते, क्योंकि सब की विषयासक्ति कभी नहीं छूट सकेगी, जो २ संन्यासियों के उपदेश से धार्मिक मनुष्य होंगे वे सब जानो संन्यासी के पुत्र तुल्य है।

(४)

आठवें समुल्लास में मध्य भाग से कुछ आगे सृष्टि के विषय में 'प्रश्न' व 'उत्तर' के रूप में श्री स्वामी जी के शब्द हैः—

(प्रश्न) कभी सृष्टि का प्रारम्भ है वा नहीं ?

(उत्तर) नहीं, जैसे दिन के पूर्व रात और रात के पूर्व दिन तथा दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन बराबर चला आता है इसी प्रकार सृष्टि के पूर्व प्रलय और प्रलय के पूर्व सृष्टि तथा सृष्टि के पीछे प्रलय और प्रलय के आगे सृष्टि अनादि काल से चक्र चला आता है। इसकी आदि वा अन्त नहीं। किन्तु जैसे दिन वा रात या आरम्भ और अन्त देखने में आता है उसी प्रकार सृष्टि और प्रलय का आदि अन्त होता रहता है, क्योंकि जैसे परमात्मा, जीव, जगत् का कारण तीन स्वरूप से अनादि हैं, जैसे जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और वर्त्तमान प्रवाह से अनादि हैं, जैसे नदी का प्रवाह वैसा ही दीखता है कभी सूख जाता, कभी नहीं दीखता फिर बरसात में दीखता और उष्णकाल में नहीं दीखता, ऐसे व्यवहारों को प्रवाहरूप जानना चाहिये। जैसे परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव अनादि हैं वैसे ही उसके जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करना भी अनादि हैं जैसे कभी ईश्वर

के गुण, कर्म, स्वभाव का आरम्भ और अन्त नहीं इसी प्रकार उसके कर्त्तव्य कर्मों का भी आरम्भ और अन्त नहीं।

उत्तरार्द्ध

सत्यार्थ प्रकाश के केवल प्रथम संस्करण के उत्तरार्द्ध में कुल दो समुल्लास ग्यारह व बारह थे किन्तु बाद को तेरहवें व चौदहवें समुल्लासों को स्वामी जी ने और बढ़ाया। अतः चारों समुल्लासों में है:—

(११) आर्य्यावर्त्तीय मतमतान्तर का खण्डन मण्डन विषय।

(१२) चार्वाक, बौद्ध और जैन मत का विषय।

(१३) ईसाई मत का विषय।

(१३) मुसलमानों के मत का विषय।

सारांश यह कि अनेक मतमतान्तरों में जो बातें असत्य फैली हुई हैं उनका उल्लेख विशेष रूप से इन चारों समुल्लासों में है। उदाहरणार्थ यह जानना चाहिये:—

ग्यारहवें समुल्लास में अन्तिम अंश से पहले ही जाति व उन्नति के विषय में 'प्रश्न' व 'उत्तर' के रूप में श्री स्वामी जी ने लिखा है:—

(प्रश्न) देखो यूरोपियन लोग मुण्डे जूते, कोट, पतलून पहरते, होटल में सबके हाथ का खाते हैं इसीलिये अपनी बढ़ती करते जाते हैं।

(उत्तर) यह तुम्हारी भूल है क्योंकि मुसलमान अन्त्यज लोग सब के हाथ का खाते हैं पुनः उनकी उन्नति क्यों नहीं होती? जो यूरोपियनों में बाल्यावस्था में विवाह न करना, लड़का

लड़की को विद्या सुशिक्षा करना कराना, स्वयंवर विवाह होना, बुरे २ आदमियों का उपदेश नहीं होता, वे विद्वान् होकर जिस किसी के पाखण्ड में नहीं फँसते, जो कुछ करते हैं वह सब परस्पर विचार और सभा से निश्चित करके करते हैं, अपनी स्वजाति की उन्नति के लिये तन मन धन व्यय करते हैं, आलस्य को छोड़ उद्योग किया करते हैं। देखो! अपने देश के बने हुए जूते को आफिस और कचहरी में जाने देते हैं इस देशी जूते को नहीं। इतने ही में समझ लेओ कि अपने देश के बने जूतों का भी कितना मान प्रतिष्ठा करते हैं उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नहीं करते। देखो! कुछ सौ वर्ष से ऊपर इस देश में आये यूरोपियनों को हुए और आजतक यह लोग मोटे कपड़े आदि पहरते हैं जैसा कि स्वदेश में पहिरते थे परन्तु उन्होंने अपने देश का चाल चलन नहीं छोड़ा और तुम में से बहुत से लोगों ने उनकी नकल करली इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान् ठहरते हैं। अनुकरण करना किसी बुद्धिमान् का काम नहीं और जो जिस काम पर रहता है उसको यथोचित करता है। आज्ञानुवर्ती बराबर रहते हैं। अपने देशवालों को व्यापार आदि में सहाय देते हैं, इत्यादि गुणों और अच्छे २ कर्मों से उनकी उन्नति है। मुण्डे जूते, कोट, पतलून, होटल में खाने पीने आदि साधारण और बुरे कामों से नहीं बढ़े हैं और इनमें जाति भेद भी है। देखो! जब कोई यूरोपियन चाहे कितने बड़े अधिकार पर और प्रतिष्ठित हो किसी अन्य देश अन्य मत वालों की लड़की अन्य देशवाले से विवाह कर लेती है तो उसी समय उसका निमन्त्रण बैठकर खाने और विवाह आदि अन्य लोग बन्द कर देते हैं।

यह जातिभेद नहीं तो क्या ? और तुम भोले भालों को बहकाते हैं कि हम में जातिभेद नहीं। तुम अपनी मूर्खता से मान भी लेते हो। इसलिये जो कुछ करना वह सोच विचार के करना चाहिये जिसमें पुनः पश्चात्ताप करना न पड़े। देखो! वैद्य और औषध की आवश्यकता रोगी के लिये है नीरोग के लिये नहीं। विद्यावान् नीरोग और विद्यारहित अविद्यारोग से ग्रस्त रहता है। उस रोग के छुड़ाने के लिये सत्यविद्या और सत्योपदेश है। उनको अविद्या से यह रोग है कि खाने पीने ही में धर्म्म रहता और जाता है। जब किसी को खाने पीने में अनाचार करता देखते हैं तब कहते और जानते हैं कि वह धर्म्मभ्रष्ट होगया। उसकी बात न सुननी और न उसके पास बैठते, न उसको अपने पास बैठने देते। अब कहिये कि तुम्हारी विद्या स्वार्थ के लिये है अथवा परमार्थ के लिये। परमार्थ तो तभी होता कि जब तुम्हारी विद्या से उन अज्ञानियों को लाभ पहुँचता। जो कहो कि वे नहीं लेते हम क्या करें ? यह तुम्हारा दोष है उनका नहीं, क्योंकि तुम जो अपना आचरण अच्छा रखते तो तुमसे प्रेम कर वे उपकृत होते सो तुमने सहस्रों का उपकार नाश करके अपना ही सुख किया सो यह तुमको बड़ा अपराध लगा, क्योंकि परोपकार करना धर्म्म और परहानि करना अधर्म कहाता है। इसलिये विद्वान् को यथायोग्य व्यवहार करके अज्ञानियों को दुःख सागर से तारने के लिये नौकारूप होना चाहिये। सर्वथा मूर्खों के सदृश कर्म न करने चाहिये किन्तु जिसमें उनकी और अपनी दिन २ प्रति उन्नति हो वैसे कर्म करने उचित हैं।

बारहवें समुल्लास के प्रारम्भिक भाग में 'नास्तिक' व 'आस्तिक'

के शब्दों में श्री स्वामीजी ने लिखा है:—

(नास्तिक) ईश्वर व्यापक नहीं है जो व्यापक होता तो सब वस्तु चेतन क्यों नहीं होतीं ? और ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि की उत्तम, मध्यम, निकृष्ट अवस्था क्यों हुई। क्योंकि सब में ईश्वर एकसा व्याप्त है तो छुटाई बड़ाई न होनी चाहिये।

(आस्तिक) व्याप्य और व्यापक एक नहीं होते किन्तु व्याप्य एकदेशी और व्यापक सर्वदेशी होता है, जैसे आकाश सब में व्यापक है और भूगोल और घटपटादि सब व्याप्य एकदेशी हैं, जैसे पृथिवी आकाश एक नहीं वैसे ईश्वर और जगत् एक नहीं, जैसे सब घटपटादि में आकाश व्यापक है और घटपटादि आकाश नहीं वैसे परमेश्वर चेतन सब में है और सब चेतन नहीं होता, जैसे विद्वान् अविद्वान् और धर्मात्मा अधर्मात्मा बराबर नहीं होते विद्यादि सद्गुण और सत्यभाषणादि कर्म, सुशीलतादि स्वभाव के न्यूनाधिक होने से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज बड़े छोटे माने जाते हैं वर्णों की व्याख्या जैसी "चतुर्थसमुल्लास" में लिख आये हैं वहाँ देखलो।

(नास्तिक) जो ईश्वर की रचना से सृष्टि होती तो माता पितादि का क्या काम ?

(आस्तिक) ऐश्वरी सृष्टि का ईश्वर कर्त्ता है, जैवो सृष्टि का नहीं, जो जीवों के कर्त्तव्य कर्म हैं उनका ईश्वर नहीं करता किन्तु जीव ही करता है जैसे वृक्ष, फल, ओषधि, अन्नादि ईश्वर ने उत्पन्न किया उसको लेकर मनुष्य न पीसे, न कूटें न रोटी आदि पदार्थ बनावें और खावें तो क्या ईश्वर उसके बदले इन कामों को कभी करेगा ? और जो न करें तो जीव का जीवन

भी न होसके इसलिये आदिसृष्टि में जीव के शरीरों और सांचे को बनाना ईश्वराधीन पश्चात् उनसे पुत्रादि की उत्पत्ति करना जीव का कर्त्तव्य काम है।

मत्ती रचित इंजील में प्रभु ईसामसीह के जन्म के विषय में जो कुछ उल्लेख है उसीके सम्बन्ध में तेरहवें समुल्लास के लगभग मध्य भाग में———मत्ती रचित इंजील—के शीर्षक में, उक्त इंजील के शब्द तथा श्री स्वामीजी के शब्द (समोक्षक के रूप में) इस प्रकार हैं:—

मत्तीरचित इंजील।

६०—यीशु ख्रीष्ट का जन्म इस रीति से हुआ उसकी माता मरियम को यूसफ से मंगनी हुई थी पर उनके इकट्ठा होने के पहिले ही वह देख पड़ी कि पवित्र आत्मा से गर्भवती है। देखो परमेश्वर के एक दूत ने स्वप्न में उसे दर्शन दे कहा, हे दाऊद के सन्तान यूसफ़ तू अपनी स्त्री मरियम को यहाँ लाने से मत डर क्योंकि जो गर्भ रहा है पवित्र आत्मा से है॥ इं० प० १। आ० १८। २०॥

(समीक्षक) इन बातों को कोई विद्वान् नहीं मान सकता कि जो प्रत्यक्षादि प्रमाण और सृष्टिक्रम से विरुद्ध हैं। इन बातों का मानना मूर्ख मनुष्य जङ्गलियों का काम है, सभ्य विद्वानों का नहीं। भला जो परमेश्वर का नियम है उसको कोई तोड़ सकता है? जो परमेश्वर भी निमय को उलटा पलटा करे तो उसकी आज्ञा को कोई न माने और वह भी सर्वज्ञ और निर्भ्रम है, ऐसे तो जिस २ कुमारिका के गर्भ रह जाय तब सब कोई ऐसे

कह सकते हैं कि इसमें गर्भ का रहना ईश्वर की ओर से है और झूठ मूठ कहदे कि परमेश्वर के दूत ने मुझको स्वप्न में कह दिया है कि यह गर्भ परमात्मा की ओर से है, जैसा यह असंभव प्रपंच रचा है वैसा ही सूर्य से कुन्ती का गर्भवती होना भी पुराणों में असम्भव लिखा है, ऐसी २ बातों को आँख के अन्धे गांठ के पूरे लोग मानकर भ्रमजाल में गिरते हैं यह ऐसी बात हुई होगी, किसी पुरुष के साथ समागम होने से गर्भवती मरियम हुई होगी, उसने वा किसी दूसरे ने ऐसी असम्भव बात उड़ादी होगी कि इसमें गर्भ ईश्वर की ओर से है ॥ ६० ॥

नोट—ईसाइयों से सम्बन्ध रखने वाला यह तेरहवां समुल्लास सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे संस्करण में ही बढ़ाया गया है। इस (दूसरे) संस्करण की सामग्री भाद्रपद शुक्लपक्ष सम्वत १९३९ बि० (सन् १८८२ ई०) में तैयार हुई थी जैसा कि सत्यार्थ प्रकाश की उन प्रतियों से स्पष्ट है जो कि दूसरे संस्करण अथवा (उसके आधार की ही) बाद के संस्करणों की हैं।

सन् १८८२ ई० तक बाइबिल के हिन्दी व संस्कृत अनुवाद छप चुके थे। इन्हीं अनुवादों को दृष्टि में रखकर श्रीस्वामी जी महाराज ने ईसाई मत की समीक्षा कुछ थोड़ी सी की है। जैसा कि तेरहवें समुल्लास की अनुभूमिका से स्पष्ट है जो कि इस समुल्लास से पहले ही है। परन्तु यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट रहे कि बाइबिल का हिन्दी भाषान्तर अब उन हिन्दी शब्दों में नहीं रहा है जिनमें कि पहले था। निदान तेरहवें समुल्लास में बाइबिल के वाक्य जिन शब्दों में दिये गये हैं वे वास्तव में सन् १८८२ ई० के पूर्व के भाषान्तर के हैं। इसी कारण उक्त

शब्दों और आज कल की हिन्दी बाइबिल के शब्दों में कुछ भिन्नता अवश्य मिलती है।

सूचना

हिन्दी में सम्पूर्ण बाइबिल व उसके खण्डों की जो प्रतियाँ भिन्न-भिन्न समयों व भिन्न-भिन्न प्रेसों की छपी हुई मैंने देखी हैं उनसे अभी तक इस नतीजे पर पहुँचा हूँ:—

(१) सन् १९०५ ई० तथा इसके बाद की जो प्रतियाँ बाइबिल सूसायटी इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित हैं उनका पाठ पूर्णरूप से उन प्रतियों से नहीं मिलता जो इलाहाबाद से ही सन् १८७४ ई० व सन् १८९२ ई० तथा इस समय के बीच में प्रकाशित हुई हैं।

(२) हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश (तेरहवें समुल्लास) में जो उदाहरण बाइबिल के हैं वह सब सन् १८७४ ई० व सन् १८९२ ई० तथा इस समय के बीच के संस्करणों से मिलते हैं।

(३) केवल 'नया नियम' (The new Testament') की प्रति मिशन प्रेस लुधियाना (पंजाब) सन् १८६९ ई० की छपी हुई मैंने देखी तो उसका पाठ उक्त समस्त प्रतियों से कुछ भिन्न ही मिला।

कुरानशरीफ़ के आरम्भ में—बिस्मिल्लाहिर्रहिमानिर्रहीम—है। अब इसका अर्थ कुछ मुसलमान विद्वानों ने दूसरे ढंगों पर किया है किन्तु सन् १८८२ ई० से पूर्वकाल में इसका जो अर्थ मुसलमान विद्वानों ने प्रायः किया है उसी आशय को लेकर

समीक्षक के रूप में (चौदहवें समुल्लास के आरंभ में) श्री स्वामी जी ने इस प्रकार लिखा:—

आरंभ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करनेवाला दयालु ॥ मंजिल १ । सिपारा १ । १ ॥

(समीक्षक) मुसलमान लोग ऐसा कहते हैं कि कुरान खुदा का कहा है परन्तु इस वचन से विदित होता है कि इसका बनानेवाला कोई दूसरा है क्योंकि जो परमेश्वर का बनाया होता तो "आरम्भ साथ नाम अल्लाह के" ऐसा न कहता किन्तु "आरम्भ वास्ते उपदेश मनुष्यों के" ऐसा कहता ! यदि मनुष्यों को शिक्षा करता है कि तुम ऐसा कहो तो भी ठीक नहीं, क्योंकि इससे पाप का आरम्भ भी खुदा के नाम से होकर उसका नाम भी दूषित हो जायगा। जो वह क्षमा और दया करनेहारा है तो उसने अपनी सृष्टि में मनुष्यों के सुखार्थ अन्य प्राणियों को मार, दारुण पीड़ा दिलाकर मरवा के मांस खाने की आज्ञा क्यों दी ? क्या वे प्राणी अनपराधी और परमेश्वर के बनाये हुए नहीं हैं ? और यह भी कहना था कि "परमेश्वर के नाम पर अच्छी बातों का आरंभ" बुरी बातों का नहीं इस कथन में गोलमाल है, क्या चोरी, जारी, मिथ्याभाषणादि अधर्म का भी आरंभ परमेश्वर के नाम पर किया जाय ? इसी से देख लो कसाई आदि मुसलमान, गाय आदि के काटने में भी "बिस्मिल्लाह" इस वचन को पढ़ते हैं जो यही इसका पूर्वोक्त अर्थ है तो बुराइयों का आरंभ भी परमेश्वर के नाम पर मुसलमान करते हैं और मुसलमानों का "खुदा" दयालु भी न रहेगा क्योंकि उसकी दया उन पशुओं पर न रही ! और जो मुसलमान लोग इसका अर्थ नहीं जानते

तो इस वचन का प्रकट होना व्यर्थ है यदि मुसलमान लोग इसका अर्थ और करते हैं तो सूधा अर्थ क्या है ? इत्यादि ॥ १ ॥

नोट

मुसलमानों से सम्बन्ध रखने वाला चौदहवाँ समुल्लास भी सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे संस्करण में ही बढ़ाया गया है। अभी पहले लिखा गया है कि इस संस्करण की सामग्री भाद्रपद शुक्ल-पक्ष सम्वत् १९३९ वि० (सन् १८८२ ई०) में तैयार हुई थी जैसा कि स० प्रकाश की उन प्रतियों से स्पष्ट है जो कि दूसरे संस्करण अथवा (इसके आधार की ही) बाद के संस्करणों की हैं।

अब यह ज्ञात रहे कि सन् १८८२ ई० से पूर्व कुरान शरीफ का कोई अनुवाद हिन्दी में नहीं हुआ था और श्री स्वामी जी महाराज ने चौदहवें समुल्लास के साथ वाली अनुभूमिका में (जो पहले ही है) साफ लिखा है:—

जो कुरान अर्बी भाषा में है उस पर मौलवियों ने उर्दू में अर्थ लिखा है उस अर्थ का देवनागरी अक्षर और आर्य्य भाषान्तर कराके पश्चात अर्बी के बड़े २ विद्वानों से शुद्ध करवा के लिखा गया है। यदि कोई कहे कि यह अर्थ ठीक नहीं है तो उस को उचित है कि मौलवी साहबों के तर्जुमों का पहिले खण्डन करे पश्चात इस विषय पर लिखे।

निदान सन १८८२ ई० से कुछ पूर्व तक ही कुरान शरीफ़ के जो पूर्ण अनुवाद उर्दू में हुये हैं, उन्हीं के आधार पर कुरान

शरीफ़ की आयतों (वाक्यों) का हिन्दी अर्थ श्री स्वामी जी महाराज ने चौदहवें समुल्लास में दिया है।

उर्दू अनुवाद—पूर्ण

सत्यार्थ प्रकाश। दूसरे संस्करण की तैयारी (सन् १८८२ ई०) से पूर्व कुरान शरीफ़ के जिन पूर्ण उर्दू अनुवादों का पता मुझे चला है, वह यह हैं :—

(१) मौलाना शाह वली उल्ला साहब दिल्ली के एक सुप्रसिद्ध विद्वान थे। उनके दूसरे पुत्र मौलाना शाहरफ़ी उद्दीन साहब (स्वर्गीय सन् १८१८ ई०) कृत उर्दू अनुवाद।

(२) मौलाना शाहरफ़ी उद्दीन साहब के छोटे भाई मौलाना शाह अब्दुल कादिर (स्वर्गीय सन् १२३० हिजरी अर्थात् सन् १८१४ या १८१५ ई०) कृत उर्दू अनुवाद।

उक्त दोनों अनुवाद सन् १८८२ ई० तक कई बार प्रकाशित हो चुके हैं और अपनी उपयोगिता व अच्छाई के कारण आज भी बहुत माननीय हैं यद्यपि अब अनेक उर्दू अनुवाद हो गये हैं।

सूचना

अब यह स्पष्ट रहे कि कुरान शरीफ़ के अनुवाद की जो परिपाटी सन् १८८२ ई० से पूर्व थी वही परिपाटी बाद को अथवा आज बीसवीं शताब्दी ईस्वी में नहीं रही। इस कारण चौदहवें समुल्लास में दिये हुये भाव यदि आज कल के भावों अथवा अर्थों के अनुसार न ठहरें तो कोई आश्चर्यजनक अथवा भ्रमयुक्त बात नहीं। श्री स्वामी जी के दिये हुए अर्थों को सन् १८८२ ई० तथा उसके पूर्व की परिपाटी के अनुसार देखना परम आवश्यक है।

एक भ्रान्ति का निवारण

जिन लोगों को यह भ्रान्ति है कि सत्यार्थ प्रकाश एक मात्र खण्डन का ही ग्रन्थ है उनको ज्ञात रहे कि केवल चार समुल्लास खण्डन के हैं और इनसे ढाई गुने अर्थात् दस समुल्लास मण्डन के हैं।

अन्त में

चौदह समुल्लासों के बाद 'स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाशः' के शीर्षक में आर्य्यों के सनातन वेदविहित मत की विशेषतः व्याख्या है जिस की बाबत श्री स्वामी जी ने लिखा है कि मैं भी यथावत मानता हूँ। निदान नमूने के रूप में कुछ बातें यह हैं:—

१—प्रथम "ईश्वर" कि जिसके ब्रह्म, परमात्मादि नाम हैं, जो सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है जिसके गुण, कर्म स्वभाव पवित्र हैं, जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है उसी को परमेश्वर मानता हूँ॥

२—"राजा" उसी को कहते हैं जो शुभ गुण, कर्म, स्वभाव से प्रकाशमान, पक्षपातरहित न्यायधर्म को सेवा, प्रजाओं में पितृवत वर्ते और उनको पुत्रवत मान के उनकी उन्नति और सुख बढ़ाने में सदा यत्न किया करे॥

३—"प्रजा" उसको कहते हैं जो पवित्र गुण, कर्म, स्वभाव को धारण करके पक्षपात रहित न्याय धर्म के सेवन से राजा और

प्रजा की उन्नति चाहती हुई राजविद्रोह रहित राजा के साथ पुत्रवत् वर्त्ते ॥

४—"देव" विद्वानों को, और अविद्वानों को "असुर' पापियों को "राक्षस" अनाचारियों को "पिशाच" मानता हूं ॥

५—"शिक्षा" जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रि-तादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूटें उनको शिक्षा कहते हैं ॥

६—"तीर्थ" जिससे दुःखसागर से पार उतरे कि जो सत्य-भाषण, विद्या, सत्संग, यमादि योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्यादानादि शुभ कर्म हैं उन्हीं को तीर्थ समझता हूं इतर जलस्थलादि को नहीं ॥

७—"शिष्य" उसको कहते हैं कि जो सत्य शिक्षा और विद्या को ग्रहण करने योग्य धर्मात्मा, विद्याग्रहण की इच्छा और आचार्य का प्रिय करनेवाला है ॥

८—"गुरु" माता पिता और जो सत्य को ग्रहण करावे और असत्य को छुड़ावे वह भी "गुरु" कहाता है ॥

९—"स्वर्ग" नाम सुखविशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है ॥

१०—"नरक" जो दुःखविशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति होना है ॥

११—"प्रार्थना" अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिये ईश्वर से याचना करना और इसका फल निरभिमान आदि होता है ॥

१२—"उपासना" जैसे ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं वैसे अपने करना, ईश्वर को सर्वव्यापक अपने को व्याप्य जानके ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है ऐसा निश्चय योगाभ्यास से सत्तात् करना उपासना कहाती है इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है ॥

आज (सन १९३८ ई० में) यह प्रश्न कई वर्षों से जोरों के साथ उठा हुआ है कि हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी हो। किन्तु स्वामीजी ने इस प्रश्न को बहुत पहले ही अनुभव किया। अतः अपने ग्रन्थों को हिन्दी में लिखा और जैसी हिन्दी में लिखा है उसकी बानगी के रूप में उपर्युक्त उद्धृत वाक्य काफी हैं।

पिछले पृष्ठों में जो वाक्य सत्यार्थ प्रकाश से उद्धृत किये गए हैं उनसे लेखक की अपूर्व शैली का भी पता लगता है। अतः कुछ और न कहकर अब यह जतला देना उचित है कि सत्यार्थ प्रकाश जिस ढंग पर लिखा गया है वह अति उत्तम है। समझने समझाने में उससे सुगमता होती है किन्तु सत्यार्थप्रकाश के आशय को भलीभांति जानने के लिये आवश्यक यह है कि इसको केवल एक ही बार पढ़कर कदापि सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये। इतना ही काफी नहीं है बल्कि अनेक बार पढ़ना चाहिये।

जिन लोगों ने सत्यार्थ प्रकाश को अनेक बार पढ़ा है उनकी तथा मेरी भी निजी सम्मति ही है कि अनेक बार पढ़ने से:—

(१) पढ़ने वाले को स्वयं बहुत लाभ होगा।

(२) पढ़ने वाला स्वयं दूसरे को बहुत लाभ पहुँचा सकेगा।

सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में ईश्वर के अनेक नामों

की व्याख्या है । इसमें संस्कृत व्याकरण से सम्बन्ध रखने वाली बातें ऐसी हैं कि केवल हिन्दी पढ़े लिखे व्यक्ति को इस समुल्लास का बोध होना कठिन है । ऐसी दशा में कुछ लोग घबड़ाते हैं और आगे बढ़ने का साहस नहीं करते ।

इस सम्बन्ध में मेरे मित्र पंडित भगवद्दत्त जी ने 'सचित्र भगवत् भक्ति दर्पण' में जो कुछ लिखा है उसका सार यह है:—

(१) सबसे पहले श्री स्वामीजी महाराज की लिखी हुई भूमिका को पढ़ना चाहिये ।

(२) इसके बाद समुल्लासों को इस क्रम से पढ़ना चाहिये :—

२, १०, ११, ४, ५, ६, १३, १४, ३, ७, ८, १२, ९ फिर अन्त में प्रथम । किन्तु यह ध्यान रहे कि उत्तरार्द्ध के प्रत्येक समुल्लास को आरम्भ करने से पूर्व उसके पहले लिखी हुई अनुभूमिका को पढ़ना परम आवश्यक है ।

हाँ, यह भी जान लेना चाहिये कि प्रथम व दूसरे समुल्लास के भाष्य—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहोर—की ओर से सम्बत् १९९१ व १९९२ वि० में प्रकाशित हो चुके हैं । इनकी बदौलत कम से कम दो समुल्लासों के समझने में सुगमता हो सकती है ।

———

आश्चर्यजनक प्रकाशन

(१)

सत्यार्थप्रकाश को सन् १८७५ ई० में पहले पहिल श्री राजा जयकृष्णदास बहादुर सी० आई० ई० ने बनारस के स्टार प्रेस में छपवाया था। दूसरी बार सन् १८८४ ई० में संशोधन व वृद्धि के साथ वैदिक यंत्रालय से निकला जो उस समय प्रयाग में था (और अब अजमेर में है)।

प्रथम संस्करण की समाप्ति पर इस ग्रन्थ की मांग बहुत अधिक थी, इस कारण यह बहुत ही जल्दी में छपा था और इस में बहुत सी अशुद्धियाँ हो गई थीं। अतः दूसरे संस्करण में प्रेस के प्रबन्धकर्त्ता का वक्तव्य इस आशय का है और उसमें कई पृष्ठ शुद्धि व अशुद्धियों के निमित्त हैं।

अब इस बात का व्यवरा नीचे दिया जा रहा है कि पहिले व दूसरे तथा दूसरे के आधार पर अन्य संस्करण 'वैदिक यन्त्रालय' से कब व कितने निकल चुके हैं :—

संस्करण	समय	संख्या
१	१८७५ ई०	१०००
२	१८८४ ई०	२०००
३	१८८७ ई०	३०००
४	१८९२ ई०	५०००
५	१८९७ ई०	५०००
६	१९०२ ई०	५०००

७	१९०५ ई०	५०००
८	१९०८ ई०	५०००
९	१९०९ ई०	६०००
१०	१९११ ई०	६०००
११	१९१३ ई०	६०००
१२	१९१४ ई०	६०००
१३	१९१६ ई०	४०००
१४	१९१७ ई०	६०००
१५	१९२२ ई०	५०००
१६	१९२४ ई०	५०००
❀१७	१९२४ ई०	१००००
१८	१९२५ ई०	५०००
१९	१९२६ ई०	१५०००
२०	१९२६ ई०	२००००
२१	१९२७ ई०	२००००
२२	१९२८ ई०	२५०००
२३	१९३३ ई०	२००००

❀ यह संस्करण 'शताब्दी संस्करण' के नाम से विख्यात है सन् १९२५ ई० (सम्वत् १९८१ विक्रमी) में श्री स्वामीजी महाराज की जन्म शताब्दी मथुरा में मनाई गई थी। उसी अवसर पर सत्यार्थप्रकाश तथा स्वामीजी कृत अन्य ग्रन्थों का संग्रह दो भागों में निकला था।

२४	१९३४ ई०	२००००
२५	१९३५ ई०	२००००
		२३००००

संस्करण १७ तक जो सत्यार्थप्रकाश छपे हैं उनका आकार १० X ६½ इञ्च था। सम्भवत: इसके बाद ही वैदिक यंत्रालय के संस्करण १० X ७½ इञ्च के आकार में निकले हैं।

(२)

श्री गोविन्दराम हासानन्द जी द्वारा निम्नलिखित संस्करण निकल चुके हैं :—

संस्करण	समय	संख्या
१.	१९२४ ई०	६०००
२.	१९३४ ई०	५०००
३.	१९३६ ई०	२०००
४.	१९३७ ई०	२२००
		१५२००

ज्ञात रहे कि इन संस्करणों का जन्म मथुरा जन्म शताब्दी के समय हुआ था। इनमें प्रमाण सूची, विषय अनुक्रमणिका आदि कई उपयोगी बातों की वृद्धि है। इन्हीं कारणों से इन संस्करणों का दाम दूसरे संस्करणों से कुछ अधिक ज़रूर है। पहिला संस्करण १० X ७½ इंच के आकार में निकला है और 'वणिक प्रेस कलकत्ता' का छपा हुआ है। शेष संस्करण ७½ X ५ इञ्च के आकार में हैं और 'वैदिक प्रेस कलकत्ता' के छपे हुये हैं। यह सब संस्करण 'वैदिक पुस्तकालय' द्वारा प्रकाशित हैं जो कि अब कलकत्ता से दिल्ली में पहुँच गया है।

(३)

आर्यसाहित्य मण्डल अजमेर द्वारा यह संस्करण प्रकाशित हैं :—

संस्करण	समय	संख्या
१	सं० १९९०वि०	२५०००
२	सं० १९९२ वि०	२००००
		४५०००

श्रीमद् दयानन्द निर्वाण अर्द्ध शताब्दी संस्करण—के नाम से सं० १९९० (सन् १९३३ ई०) में मण्डल ने ही प्रथम बार ७॥ X ५ इञ्च के आकार का संस्करण लगभग आठ सौ पृष्ठों का निकाला है। इसी आकार में दूसरा संस्करण भी प्रकाशित हुआ है। और यह भी ज्ञात रहे कि पहले पहल इस मण्डल ने ही सत्यार्थ प्रकाश को बहुत ही कम दाम पर प्रकाशित किया था और अब बड़े हर्ष का विषय है कि इस मण्डल ने बहुत ही बढ़िया संस्करण मोटे टाइप में निकालने की घोषणा की है।

इस मण्डल की ओर से बीस हजार सत्यार्थ प्रकाश इस समय और छप रहा है जो सम्भवतः सन् १९३९ ई० में छप जावेगा। यहाँ के संस्करण 'फाइन आर्ट प्रिन्टिङ्ग प्रेस अजमेर' के छपे हुए हैं।

(४)

श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा सम्वत् १९९३ वि० (सन् १९३६ ई०) में एक संस्करण दस हजार प्रतियों का चन्द्रप्रिंटिङ्ग प्रेस फतेहपुरी दिल्ली से छपकर प्रकाशित

हुआ है। इस संस्करण की प्रति छोटे आकार अर्थात ७½×५ इञ्च के ८२८ पृष्ठों की हैं।

इस संस्करण के सिवाय कोई अन्य संस्करण मुझे ऐसा नहीं मिला व न मेरी जानकारी में ही आया है जोकि इस सभा द्वारा प्रकाशित हुआ हो।

विचारशील पुरुष जानते हैं कि अब (सन् १९३८ ई०) से पहले अर्थात् पिछले १८ वर्षों में कांग्रेस तथा स्वराज्य विषयक पुस्तकों का बड़ा जोर रहा। नहीं तो सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाशन तथा प्रचार बहुत तेजी के साथ अवश्यमेव और अधिक हुआ होता।

सत्यार्थ प्रकाश के अधिक प्रचार के मूल कारण दो हैं:—

(१) दाम में भारी कमी का होना।

(२) हिन्दी का प्रचार जोरों के साथ होना।

अब इस सम्बन्ध में कुछ और न कहते हुये केवल इतना कह देना काफी समझता हूँ कि सत्यार्थप्रकाश के प्रचार की अभी देश में बहुत ज्यादा आवश्यकता है क्योंकि देश की जैसी दशा है वह प्रत्यक्ष ही है। अथवा भलीभाँति विचार करने से मालूम हो जाती है।

हाँ, यह भी स्पष्ट रहे, कि केवल पुस्तक का ही प्रचार न होना चाहिये बल्कि इसके पठन-पाठन का प्रचार भी परम आवश्यक है। ऐसा करने में ही व्यक्ति जाति तथा देश का वास्तविक कल्याण है।

सस्ता होने की विशेषता

दाम के विचार से भी सत्यार्थ प्रकाश में यह विशेषता है कि अब वह बहुत ही कम दाम में मिल जाता है। जिस आकार में यह छोटीसी पुस्तक है उसी आकार में पूरा सत्यार्थ प्रकाश लगभग ८०० पृष्ठों में छपा है किन्तु केवल ।)॥ (साढ़े चार) या ।-) (पांच) अथवा ।=) (छः) आना में मिल जाता है। इतने पृष्ठों की शायद ही हिन्दी की कोई पुस्तक इतने कम दाम में मिल सकती होगी। कुछ लोग समझते हैं कि ईसाइयों के धर्म ग्रन्थ का दाम बहुत ही कम है। किन्तु मुकाबिला करने से साफ ज्ञात हो जायगा कि हिन्दी सत्यार्थप्रकाश से सस्ता वह धर्म ग्रन्थ अथवा कोई भी अन्य ग्रन्थ कदापि नहीं है।

सत्यार्थप्रकाश के दूसरे संस्करण (प्रकाशित सन् १८८४ ई०) का दाम २॥) था। पांचवे का दाम २) हो गया था। दसवें संस्करण पर (जो सन् १९११ ई० का है) दाम केवल १) लिखा हुआ मिलता है। किन्तु सन् १९२२ ई० में जो पन्द्रहवां संस्करण निकला है उसकी एक प्रति का दाम २॥) हो गया था क्योंकि यूरप का महायुद्ध जो सन् १९१४ ई० में आरम्भ हुआ था उसके कारण कागज का भाव बहुत ही बढ़ गया था।

सन् १९२५ ई० में श्री स्वामी जी की जो शताब्दी मथुरा में मनाई गई थी उस अवसर पर सत्यार्थप्रकाश का प्रचार विशेषरूप से हुआ था। निदान उस समय तथा उसके पश्चात् कागज की मंहगी पहले के समान न थी इस कारण सत्यार्थप्रकाश के दाम में भारी कमी आरम्भ हुई और जब कि इसकी अधिक

प्रतियों के प्रकाशन की आवश्यकता प्रतीत हुई तो थोड़े ही समय के भीतर कई स्थानों से इसके संस्करण भारी संख्या में निकले जैसा कि पहले लिखा जा चुका है। इस बात के साथ ही साथ दाम में भी भारी कमी हुई। अतः अब एक प्रति जितने कम दाम में मिल जाती है उसकी बाबत ऊपर लिखा जा चुका है।

कुछ अनुवाद

हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश के कई अनुवादों को मैंने देखा। किन्तु निश्चयरूप से अभी तक मैं नहीं जान सका कि पहले पहिल किस भाषा में अनुवाद हुआ। यद्यपि मेरी इच्छा न थी कि उनके विषय में कुछ लिखूँ तथापि इस विचार से कुछ लिख ही रहा हूँ कि शायद लोगों को कुछ अधिक लाभ हो और जो कुछ मेरे द्वारा जाना जा सकता है उसके लिये किसी को नये सिरे से क्यों कष्ट करना पड़े।

उर्दू में

एक अनुवाद श्री राधाकिशन मेहता जी कृत सन् १८९७ ई० का है। इसका पुराना संस्करण जो मेरी दृष्टि में आया है वह सर्वहितकारी प्रेस' लाहौर सन् १९०५ ई० का छपा हुआ है। १० X ६½ इंच के आकार के ५७० पृष्ठों का है और इसका दाम केवल एक रुपया रहा है। इसमें श्री स्वामी जी कृत 'आर्य उद्देश रत्न माला का भी अनुवाद शामिल है।

यह तो निश्चय है कि उक्त संस्करण प्रथम संस्करण नहीं। इससे पहले यह संस्करण एक ही बार या अनेक बार छपा था। कब अथवा कब २ छपा था, इस प्रकार की बातों के विषय में मुझे कुछ नहीं पता चला है। हाँ, सन् १९०५ ई० के बाद का जो संस्करण मेरी दृष्टि में आया है उस पर प्रकाशक का नाम—लाजपतराय एण्ड सन्स बुकसेलर लाहौर छपा हुआ है। इस प्रकाशक की ओर से यह संस्करण चौथा है और गीलानी

प्रेस लाहौर से दस हज़ार की संख्या में छपा है। इसमें प्रकाशन का समय अङ्कित नहीं। यह ७ X ५ इञ्च के आकार के आठ सौ से भी कुछ अधिक पृष्ठों में है और एक प्रति का दाम केवल दस आना रहा है।

इस संस्करण से इन बातों का पता अवश्य चला है:—

(१) श्री दयानन्द जन्म शताब्दी के अवसर पर उक्त प्रकाशक ने इसको अपने यहाँ से पहली बार अवश्य प्रकाशित किया था।

(२) श्रीमती आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा कुछ अन्य विद्वानों का भी हाथ इस अनुवाद में रहा है।

दूसरा पृथक अनुवाद भी कई विद्वानों के उद्योग का फल है। यह अनुवाद श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से है जो पहिले पहिल सन् १८९८ ई० में प्रकाशित हुआ है। यह संस्करण १० X ६½ इञ्च के बड़े आकार में है। इसका दाम डेढ़ या दो रुपया था।

सन् १९३०ई० का छपा हुआ दसवां संस्करण 'आर्य पुस्तकालय' अनारकली लाहौर द्वारा प्रकाशित है। छोटे आकार ७ X ५ इञ्च के ८०० पृष्ठों का है किन्तु दाम केवल दस आना ही रहा।

बङ्गाली में

भारत मिहिर यंत्रालय कलकत्ता बंगला सन् १३०८ (सन् १९०१ या १९०२ ई०) में छपा है और परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा प्रकाशित हुआ है। इसके निमित्त श्री राव उमरावसिंह

जी रईस कचेश्वर जिला बुलन्दशहर निवासी की ओर से विशेष (आर्थिक) सहायता हुई थी ।

यह अनुवाद कलकत्ता विश्वविद्यालय के किसी एम. ए. महोदय का किया हुआ है । जिनका नाम उस पर अंकित नहीं । यह १० × ६½ इञ्च के आकार में लगभग ८३० पृष्ठों का है और इस पर एक प्रति का दाम डेढ़ रुपया लिखा हुआ है । मेरे विचार से यही प्रथम संस्करण है किन्तु यह संस्करण कितना छपा था इसकी बाबत कुछ पता नहीं चला । हां, इसमें ऐसी सामग्री का उल्लेख अवश्य है जिसके द्वारा लोग श्री स्वामी जी के जीवन के विषय में यदि जानना चाहें तो कुछ जान सकें ।

दूसरा संस्करण मेरी दृष्टि मे नहीं आया और उक्त संस्करण के बाद का जो संस्करण मैंने देखा है वह तीसरा संस्करण श्रीधर प्रेस कलकत्ता सन् १९२९ ई० बंगला सन् १३३३ का छपा हुआ आर्य समाज कलकत्ता द्वारा प्रकाशित है । यह तीन हजार की संख्या में छपा है और १० × ६½ इञ्च के आकार में कुल ६३४ पृष्ठों का है और इस पर केवल एक रुपया दाम लिखा हुआ है ।

मैंने दोनों अनुवादों का कुछ मुकाबिला एक बंगाली जानने वाले सज्जन से कराया जिस से यह मालूम हुआ कि दोनों का अनुवाद कहीं तो एक सा ही है और कहीं कुछ भिन्न है । सम्भव है कि तृतीय संस्करण में अनुवाद को विशेष रूप से संशोधित किया गया हो ।

अँग्रेजी में

श्री डा० चिरंजीव भारद्वाज कृत जो अनुवाद 'लाइट आफ

ट्रुथ' (Light of Truth) के नाम से है उसके दो संस्करणों को मैंने देखा है। दोनों से पता चला है कि प्रथम बार इसका पूर्ण संस्करण सन् १९०६ ई० में हुआ था किन्तु वह संस्करण मेरी दृष्टि में नहीं आया। इस कारण मैं कुछ और अधिक नहीं लिख सकता कि वह किस प्रेस में छपा था, कितना छपा था इत्यादि।

दूसरा संस्करण केवल पूर्वार्द्ध के दस समुल्लासों का है। श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त ने इसे सन् १९१५ ई० में विदेश के निमित्त विशेषरूप से छपवाया था इस कारण केवल दस समुल्लासों को ही छपवाया था।

यह संस्करण इलाहाबाद के 'लीडर प्रेस' से ५००० की संख्या में छपा है। दाम इस पर तीन रुपया लिखा है और १० × ६½ इञ्च आकार के लगभग ३५० पृष्ठों का है।

एक संस्करण आर्यसमाज मद्रास १७० चायना बाजार रोड की ओर से सन् १९३२ ई० हिन्दी प्रचार प्रेस ट्रिपलीकेन मद्रास में छपा है। इसमें पूरे १४ समुल्लास हैं। यह १० × ६½ इंच आकार के लगभग ७०० पृष्ठों में अच्छा छपा हुआ है और इसका दाम बहुत ही कम अर्थात् सजिल्द का २) और अजिल्द का केवल एक रुपया आठ आना है।

संस्कृत में

श्री दयानन्द जन्मशताब्दी के अवसर पर सम्वत् १८८१ वि. में दो हजार की संख्या में किशोर यन्त्रालय बरेली में छपा है और जन्म शताब्दी उत्सव के प्रधान श्री नारायण स्वामी जी महाराज द्वारा प्रकाशित हुआ है।

इसमें चौदह समुल्लासों का अनुवाद है। यह अनुवाद १०—६½ इंच आकार के ५०८ पृष्ठों में है। इस ग्रन्थ के सम्बन्ध में इसके अनुवादक महोदय श्री पण्डित शंकर देव जी पाठक का यह कथन द्रष्टव्य है:—

प्रास्ताविकम्

सत्यार्थप्रकाशो हि अनेकासु भाषासु विविधेषु च रूपेषु सहस्रशो मुद्रितो दृग्गोचरीक्रियते। केवलं हिन्दीभाषमयस्यैव विराजते षोडशं संस्करणम्।

एवंसत्यपि सर्वभाषाजनन्यां, परमात्मसमादृतायां देवगिरि एतदभावो मनस्विनां प्रशस्तविदुषां मनःक्षोभं सततं जनयतिस्मैव।

एतादृक्ष्वेव महानुभावेषु आर्यसमाजरत्नैर्महामान्यै. सुविख्यात महिमभिः श्री नारायणस्वामिभिः सदवसरोऽयं शताब्दिरूपः श्रीयुतां महर्षिवर्याणां चरणयोः संस्कृतभाषानूदिततत्कृतिभक्त्युपहारसमर्पण स्येत्यालोचमानैरतद्योग्येऽपि मयि दुर्वहोऽयं भारो न्यस्तः। एतद्दुष्करकार्यसम्पादनाक्षमोप्यहं महतामादेश इति तदाज्ञां शिरोधार्यां विधाय तत्परोऽभूवमनुवादकरणाय। एतत् कार्यं विदधता मया भूयांसि काठिन्यान्यनुभूतानि। तद्यथा केचित् शब्दार्थगभीरां शोभनालङ्कारालङ्कृतां निरवद्यामभिधेयसम्पदमुक्तिं गुर्वीं मन्यन्ते। अपरे तु शब्दानुरूपां सुरम्यां संस्कृतरचनां मान्यां प्राहुः। इतरे च गुरुभावपरिपूर्णां प्रसादमाधुर्यवतीं सरसां भाषां लेख्यामभिदधते। इत्यादिभिर्बहुभिः काठिन्यैर्व्याहन्यमानेन मया शब्दानुवाद एवावलम्बितः।

इस अनुवाद का दाम पुस्तक पर सवा दो रुपया लिखा हुआ है और यह अनुवाद अब कार्यालय सार्वदेशिक सभा श्रद्धा-नन्द बाज़ार दिल्ली से मिल सकता है।

उक्त अनुवादों के सिवा कुछ और अनुवाद मराठी, गुजराती व पंजाबी आदि में अवश्य हुये हैं किन्तु मैंने केवल उन अनुवादों व उनके उन संस्करणों पर ही लिखा है जो कि अनुवादों के विषय में लिखते समय मेरी दृष्टि में रहे हैं।

दोहा—चौपाई के रूप में हिन्दी का एक संस्करण निकला है। पंजाबी के एक संस्करण का उल्लेख सन् १८९९ ई० के उर्दू सत्यार्थ प्रकाश (श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा प्रकाशित) की भूमिका में मिला है। मुझे ख्याल आता है कि अँग्रेजी का कोई अन्य अनुवाद भी मैंने कहीं देखा था। निदान इस सम्बन्ध में अभी अनेक बातें उल्लेखनीय हैं। क्या ही अच्छा हो कि कोई व्यक्ति शीघ्रता करे और पूर्ण रूपसे लिखे अन्यथा कुछ काल के पश्चात् आवश्यक सामग्री का मिलना बड़ा कठिन होगा।

आवश्यक विचार

(१) अनेक अनुवादों तथा इन अनुवादों के अनेक संस्करणों के सम्बन्ध में जो कुछ मैंने दर्शाया है उससे अधिक आवश्यकतानुसार इन बातों के सम्बन्ध में लिखा जाय कि कौन सा अनुवाद कब हुआ, जिसने किया उसका कुछ परिचय, पहले कब छपा, बाद को और कौन २ से संस्करण हुये, किन प्रेसों से मुद्रित हुये। दाम क्या रहा। इत्यादि ऐसी बातों से सत्यार्थ

प्रकाश का एक महत्त्व पूर्ण इतिहास तैयार हो सकता है। हाँ, यदि यह भी दर्शा दिया जाय कि इस ग्रन्थ के खिलाफ़ विरोधियों ने इस प्रकार आन्दोलन किया था किन्तु उसके विपरीत इसका प्रचार अधिक हुआ। अस्तु इस प्रकार का इतिहास कोई सज्जन तैयार करें तो बड़ी प्रसन्नता होगी। अथवा अनुवादों के विषय में लोग कृपा करके मुझे ही बतलाने का कष्ट करेंगे तो मैं उनका बड़ा आभारी हूँगा।

(२) हिन्दी, उर्दू व अँग्रेजी आदि किसी भाषा में भी सत्यार्थ प्रकाश को जो सज्जन छपावें अथवा जिन्होंने छपाया है वे लोग पुस्तक के प्रारम्भ के पृष्ठों में कहीं पर पिछले संस्करणों का समय व उनकी संख्या व प्रेस का नाम दे दिया करें तो भी अच्छी बात होगी। जानना चाहिये कि शताब्दी संस्करण के सत्यार्थ प्रकाश तथा अन्य ग्रन्थों में पिछले संस्करणों की चर्चा जिस प्रकार आरम्भ में है उसी प्रकार अथवा उससे कुछ अधिक उनमें भी कर दी जाया करे।

(३) जिस प्रकार मैंने सत्यार्थ प्रकाश के विषय में लिखा है उसी प्रकार यदि श्री स्वामी जी महाराज के अन्य ग्रन्थों के विषय में भी लिखा जाय तथा उनके अनुवाद आदि की आवश्यक चर्चा की जाय तो एक महत्त्व पूर्ण इतिहास तैयार हो सकता है। हिन्दी भाषा के इतिहास में उसको एक अच्छा पद प्राप्त हो सकता है और हिन्दी प्रेमियों में आर्य सामाजिक ग्रन्थों के प्रति अच्छी रुचि पैदा हो सकती है और आर्यसमाज का प्रभाव व प्रचार बढ़ सकता है।

ईश्वर किसी के हृदय में, अथवा अनेक लोगों के हृदयों में

यह उत्साह पैदा करे कि जो कुछ ऊपर लिखा है वह भलीभांति पूरा हो जाय।

(४) अजमेर, दिल्ली, लाहौर, गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय ज्वालापुर गुरुकुल वृन्दावन, बम्बई, कलकत्ता, करांची मद्रास, पूना, नागपुर, बड़ौदा, प्रयाग, बनारस आदि ऐसे स्थानों में आर्य समाज अथवा आर्य सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत जो पुस्तकालय हैं उनमें हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश के अनेक प्रेसों के संस्करणों तथा प्रत्येक अनुवाद के किसी संस्करण को एकत्र किया जाय। मैं समझता हूँ कि अभी कोई स्थान ऐसा नहीं जहाँ समस्त संस्करण अथवा समस्त अनुवादों की एक २ प्रति हो।

हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश के कुछ संस्करणों की प्रतियाँ व्यक्तिगत रूप से किसी के पास हैं। इसी प्रकार कुछ अनुवादों को प्राचीन प्रतियाँ भी व्यक्तिगत रूप से किसी २ के पास मिल जायेंगी। ऐसो प्रतियों का एक अच्छे पुस्तकालय में एकत्र हो जाना ही अच्छा है। मेरा ख्याल है कि एक समय अवश्य आवेगा जब कि ऐसी प्रतियों की आवश्यकता विशेष रूप से किसी न किसी को जरूर पड़ेगी और उस समय प्राप्ति की समस्या कहीं ज्यादा कठिन हो जायगी। हाँ, श्रीस्वामी जी कृत अन्य ग्रन्थों तथा अनुवादों के संस्करणों की एक २ प्रति भी एकत्र की जाय तो अति उत्तम बात होगी।

(५) सत्यार्थप्रकाश तथा श्री स्वामीजी के विषय में व अन्य ग्रन्थों पर देशी विदेशी विद्वानों तथा बड़े २ लोगों की कुछ सम्मतियों को कुछ पृष्ठों में इकट्ठा कर देना चाहिये। किन्तु ध्यान रहे कि ऐसी सम्मतियों का हवाला पूरा २ अवश्य दिया

जाय अर्थात् जतलाया जाय कि अमुक सम्मति अमुक समय के अमुक संस्करण के अमुक पृष्ठ अथवा पृष्ठों में है।

(६) विचार शील पुरुष जानते हैं कि इस ग्रन्थ के रचे जाने के समय भारत में बहुत ही कम पुस्तकालय थे और उस समय में बहुत ही कम पुस्तकों का प्रकाशन हुआ था। निदान सत्यार्थ प्रकाश में जिन ग्रन्थों का उद्धरण है उनकी प्राप्ति में कितनी कठिनाई लेखक को हुई होगी जब कि इस बात को भी साथ ही साथ ध्यान में लाया जाय कि श्री स्वामी जी के विरोध में कितने लोग थे।

मेरे विचार से इस विषय में ऐसा होना अच्छा होगा कि जो उद्धरण हैं उनमें से प्रत्येक की बाबत यह लिख दिया जाय कि यह उद्धरण अमुक समय के प्रकाशित व अमुक प्रेस के मुद्रित आदि ग्रन्थ में अमुक पृष्ठों तथा पृष्ठ पर है। यदि वह उद्धरण किसी हस्त लिखित प्रति में है तो उसका भी पूरा २ हवाला होना चाहिये।

हाँ, यदि कोई ग्रन्थ अनेक स्थानों से प्रकाशित हुआ हो तो ऐसे ग्रन्थ के दो तीन संस्करणों के प्रकाशन, स्थान व समय आदि का आवश्यक उल्लेख अधिक उपयोगी होगा।

सूचना

मैंने जो विचार प्रगट किये हैं यदि कोई सज्जन उनके सम्बन्ध में कुछ और परामर्श देंगे तो मैं उनका बड़ा आभारी हूँगा।

अन्तिम निवेदन

मेरा ख्याल है कि बहुत कम लोगों को सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन तथा प्रचार के विषय में ठीक २ ज्ञान है। अब सत्यार्थ प्रकाश केवल एक स्थान से ही नहीं बल्कि अनेक स्थानों से अनेक रूपों में प्रकाशित हो रहा है। ऐसी अवस्था में ऐसी उपयोगी पुस्तक के प्रेमियों से निवेदन है कि सदा नए संस्करणों की ओर ध्यान रखें ताकि उन लोगों का ध्यान विशेष रूप से सत्यार्थ प्रकाश के रखने व पढ़ने की ओर आकर्षित कर सकें जिन्होंने कि अभी तक उसे नहीं खरीदा या पढ़ा। यहाँ पर शायद इस बात का उल्लेख अनुचित न होगा कि अनेक लोगों ने सत्यार्थ प्रकाश को उस समय खरीदा जब कि मैंने उनको इस बात से प्रभावित किया कि सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाशन असाधारण तौर पर हुआ है और इसके मूल्य में भी असाधारण कमी है।

हाँ, यह भी स्पष्ट रहे कि मेरा अभिप्राय कदापि नहीं है कि आर्यसमाज अथवा वैदिक सिद्धान्त के निमित्त सब कुछ सत्यार्थ प्रकाश को ही समझ लिया जाय किन्तु मैं यह अवश्य समझता हूँ कि कोई व्यक्ति यदि सत्यार्थ प्रकाश को भलीभांति पढ़ लेगा तो वैदिक सिद्धान्तों के निमित्त वह स्वयमेव आगे बढ़ेगा।

महेशप्रसाद

मौलवी आलिम फ़ाज़िल

श्री स्वामीजी कृत अन्य ग्रन्थ

१—काशी शास्त्रार्थ ।

२—स्वामी नारायण मत खण्डन ।

३—प्रतिमा पूजन विचार ।

४—शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण ।

५—वेद विरुद्ध मत खण्डन ।

६—आर्याभिविनय ।

७—संस्कार विधि ।

८—आर्योद्देश्य रत्नमाला ।

९—पंच महायज्ञ विधि ।

१०—भ्रान्ति निवारण ।

११—ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ।

१२—व्यवहार भानु ।

१३—भ्रमोच्छेदन ।

१४—सत्य धर्म विचार ।

१५—संस्कृत वाक्य प्रबोध ।

१६—यजुर्वेद भाष्य ।

१७—ऋग्वेद भाष्य (अपूर्ण)

१८—गोकरुणा निधि ।

१९—वेदाङ्ग प्रकाश ।

२०—अष्टाध्यायी भाष्य ।

क—ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार—प्रथम भाग—श्री स्वामी श्रद्धानन्द (श्री मुन्शी राम जिज्ञासु) जी द्वारा सम्पादित ।

ख—ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन—चार भागों में—श्री पण्डित भगवत्‌दत्त जी द्वारा सम्पादित ।

॥ ओ३म् ॥

आर्य्यसमाज के नियम।

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्य्यों का परम धर्म है।

४—सत्य ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार, यथायोग्य वर्त्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

मुद्रक—गणेश प्रसाद, रमेश प्रेस, बुलानाला, बनारस।

: ओ३म् :

सत्यार्थ-प्रकाश पर विचार

(महेशप्रसाद मौलवी आलिम फ़ाज़िल द्वारा संकलित)

प्रत्येक सुन्दर फूल चाहे जहाँ कहीं हो उसकी शोभा को प्रत्येक व्यक्ति अवश्य स्वीकार करता है ; परन्तु जब ऐसे सुन्दर फूलों से एक गुल्दस्ता सजा दिया जाता है तो सबकी महत्ता कहीं अधिक बढ़ जाया करती है और वह वास्तव में लोगों की दृष्टि में विशेष रूप से भले मालूम होते हैं। निस्सन्देह इसी विचार को सन्मुख रखकर मैंने सत्यार्थ प्रकाश विषयक कुछ विचारों को एकत्र कर दिया है ताकि इनकी बदौलत सत्यार्थ प्रकाश ऐसी पुस्तक की शोभा व महत्ता बढ़े।

श्री राजा जयकिशनदासजी सी० एस० आई० (स्वर्गवास सन् १९०५ ई०) अपने समय के एक ऐसे व्यक्ति थे जिनका मान अँगरेजी सरकार, हिन्दू और मुसलमान सभों में था। उनका कुछ परिचय मैं 'अमर सत्यार्थ-प्रकाश' और 'स्वामी दयानन्द व कुरान' में दे चुका हूँ। अतः इस अवसर पर और अधिक न कहते हुए केवल यह कहना आवश्यक समझता हूँ कि उन्हीं की प्रेरणा और धन से सत्यार्थ प्रकाश की रचना हुई थी और उन्हीं के धन से सन् १८७५ ई० में सत्यार्थ प्रकाश बनारस के स्टार प्रेस में छपा था। उस संस्करण के आरंभिक भाग में उनकी ओर से जो निवेदन हैं उनमें से एक निवेदन

को नीचे दिया जाता है जिससे पता चलता है कि सत्यार्थ प्रकाश की रचना किस विचार को सन्मुख रखकर हुई है :—

"इस पुस्तक के पाठकों से मेरी यह विनयपूर्वक प्रार्थना है कि इस ग्रंथ के छपवाने से मेरा अभिप्राय किसी विशेष मत के खण्डन-मण्डन करने का नहीं किन्तु इसका मुख्य प्रयोजन यह है कि सज्जन और विद्वान् लोग इसको पक्षपात रहित होकर पढ़ें और विचारें और जिन विषयों में उनकी दयानन्द स्वामी के सिद्धान्तों से सम्मति न हो उन विषयों पर अपनी अनुमति प्रबल प्रमाण-पूर्वक लिखें जिससे धर्म का निर्णय और सत्यासत्य की विवेचना हो। मुख से शास्त्रार्थ करने में किसी बात का निर्णय नहीं होता परन्तु लिखने से दोनों पक्षों के सिद्धान्त ज्ञात हो जाते हैं और सत्य विषय का निर्णय हो जाता है। इसलिए आशा है कि सब पण्डित और महात्मा पुरुष इसकी यथावत समालोचना करेंगे और यह न समझेंगे कि मुझको किसी विशेष मत की निन्दा अभिप्रेत है। छापने में शीघ्रता के कारण इस ग्रन्थ में बहुत अशुद्धियाँ रह गयी हैं। आशा है पाठकगण इस अपराध को क्षमा करेंगे।"

श्रीस्वामीजी को अपने उद्देश की पूर्ति अथवा यह कि लोगों को विशुद्ध ज्ञान देने के लिये खण्डन करना परम आवश्यक था—इस विषय पर श्रीपूर्णचन्द्रजी एडवोकेट आगरा का कथन है:—

* "जो इन्जीनियर विश्व को या किसी भवन या नगर को फिर से निर्माण करना चाहते हैं, उनके लिए केवल Plan या नकशा बना लेना पर्याप्त नहीं है। उनके लिए तो जो भवन या नगर नकशा के प्रतिकूल बने हैं

*(साप्ताहिक हिन्दी 'आर्यमित्र' लखनऊ ६ सितम्बर १९४३ ई० पृ० ४)

उनको गिराना या संशोधित करना ही पड़ेगा। जब कहीं Town Improvement scheme नगर को उन्नत बनाने की विधि आरम्भ होती है और उसके आधीन गन्दे २ काँटे उत्पन्न करनेवाले, मकानात या भवन उनमें रहनेवालों के हित के लिए ही गिराये या तोड़े जाते हैं तो उन मकानों में रहनेवाले बड़ा दुःख मानते हैं। विधि का विरोध करते हैं। आन्दोलन करने हैं। विधि को कार्यरूप में लानेवालों को हर प्रकार का कष्ट पहुँचाते हैं, परन्तु वास्तविक उन्नति बिना उनके मिटाये हो नहीं सकती। इसलिये गिराने ही पड़ते हैं। इसलिये वैदिक धर्म के अनुसार संसार को बनाने के लिये स्वामी दयानन्द के लिये खंडन करना अनिवार्य था। प्रचलित मतों में जो कमी हैं, भूल हैं, अशुद्धियां हैं, यदि उनको न बताते तो उनका कार्य अधूरा रह जाता। इसलिये उनके ४ समुल्लास खण्डनात्मक हैं। इस खण्डन में भी बड़ी चतुराई से काम लिया है। किसी का पक्षपात नहीं किया। जो मत उनके पिता का था, विचार परिवर्तन होने तक स्वयं उनका मत था उसका अर्थात् प्रचलित पुराणिक मत से—जैसे जैनी और बौद्ध धर्म के माननेवाले से—अधिक खण्डन लिखा है। इसके पश्चात् ईसाई और मुसलमान भाइयों के मत पर विचार किया है। महाभारत के समय वैदिक धर्म का प्रचार था, उसके पश्चात् परिवर्तन या गड़बड़ आरम्भ हुई। इतिहास के दृष्टिकोण से भी इस्लाम या यवन मत का नम्बर सबमें पहिले आता है और इसलिए खण्डन सबके हित के लिये सत्य के प्रकाश के लिए किया है। उनमें जो बातें विधि के अनुकूल हैं उनको स्वीकार किया है और उनकी प्रशंसा की है जो बातें वैदिक धर्म के स्वरूप को लोप करनेवाली हैं उन पर

प्रकाश डाला है। जिनके मत का खण्डन है, यदि वह निष्पक्ष होकर उन खण्डन की बातों पर विचार करें तो उनको स्वामीजी का उपकार ही मानना चाहिये। सत्यार्थ प्रकाश के अन्तिम ४ समुल्लास पढ़ते समय स्वामी दयानन्द को एक डाक्टर (Surgeon) या Improvement Trust के Engineer की तरह उन्नति की विधि के संचालक के रूप में विचार करें तो विरोध मिट सकता है। स्वामी दयानन्द Reformer या सुधारक हैं। Reform शब्द के अर्थ हैं फिर से बनाना। इसके अन्तर्गत तीन भाव हैं। एक समय जब वह चीज बनी हुई थी उसमें गड़बड़ आ गई, उसको प्राचीन विधि के अनुसार फिर से बनाते हैं। यदि ऐसा न हो तो Reformation नहीं कहा जायगा। formation नवीन विधान कहलायगा। जो सुधारक है वह अपनी सम्मति के अनुसार जब तक बिगड़े हुए को फिर से ठीक नहीं करेगा तो बनायेगा कैसे ?"

जिन लोगों का कहना है कि सत्यार्थ प्रकाश धार्मिक ग्रन्थ नहीं, उनके लिये श्री गंगाप्रसाद उपाध्यायजी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्तप्रान्त का कथन विचारने योग्य है :—

"※ सत्यार्थ प्रकाश आर्य्य समाज का धार्मिक ग्रन्थ है, यह आर्य्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती का मुख्य ग्रन्थ है। इस में ऋषि ने उन सिद्धान्तों की व्याख्या की है जिन पर आर्य्य समाज आधारित है, यद्यपि आर्य्य समाज वेदों को ईश्वर कृत और सत्यार्थ

※ कला प्रेस, इलाहाबाद द्वारा सन् १९४३ ई० में प्रकाशित 'सत्यार्थ-प्रकाश प्रचार सम्मेलन' के नाम से हिन्दी भाषण पृ० २ व ३।

प्रकाश को ऋषि-कृत मानता है तथापि वैदिक सिद्धान्तों का यथार्थ निरूपण सत्यार्थ-प्रकाश से ही होता है। ऋषि के आगमन से पूर्व वेदों के विषय में वेदानुयायियों तथा अन्य लोगों में अनेक प्रकार के भ्रम फैले हुए थे। मध्य काल में वेदों के जो भाष्य हुए वह भी अनार्ष तथा भ्रम-मूलक थे, इसलिये भारतवर्ष में तथा अन्यत्र वैदिक धर्म का लोप हो गया। उसके स्थान में अनेक मतान्तर फैल गये। ऋषि दयानन्द ने निरुक्त, निघण्टु आदि प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों की सहायता से वेदों के यथार्थ सिद्धान्त खोज निकाले और वैदिक धर्म का पुनरुद्धार करने के लिये आर्य्य समाज की स्थापना की, एवं आर्य्य सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण के रूप में सत्यार्थ प्रकाश लिखा।

◆ ◆ ◆ ◆

एक प्रश्न और है? क्या आर्य्य समाज का धर्म-ग्रन्थ वेद है या सत्यार्थ प्रकाश या दोनों? प्रथम तो धर्म ग्रन्थ चुनने का अधिकार उस धर्म के अनुयायियों को है अन्य को नहीं। सिख जिस ग्रन्थ साहेब को अपना धर्म ग्रन्थ मानते हैं। उसके विषय में दूसरों का क्या मत है? वह ईश्वर कृत है या मनुष्य कृत यह प्रश्न गौण है। इसी प्रकार मुसलमानों के कुरान और ईसाइयों को बाइबिल है। जैनी तथा बौद्ध ईश्वर को ही नहीं मानते, परन्तु अपने संस्थापकों की वाणी को धर्म-ग्रन्थ मानते हैं। इस प्रकार आर्य्य समाज के धर्म ग्रन्थों का निर्णय भी आर्य्य समाज के लोग ही कर सकते हैं। इस पर प्रश्न उठाने का अधिकार दूसरों का नहीं है। आर्य्य समाज आरम्भ से ही इसको धर्म ग्रन्थ मानता रहा है। प्रत्येक समाज में सत्यार्थ प्रकाश की कथायें होती हैं। प्रत्येक आर्य्य प्रातःकाल

उसका पाठ करता है। उपहार में सत्यार्थ प्रकाश दिये जाते हैं। जिस प्रकार युनीवर्सिटियों के ग्रेजुएटों को बाइबिलें दी जाती थीं उसी प्रकार आर्य्य समाज की ओरसे कई बार सत्यार्थ-प्रकाश भेंट में दिये जा चुके हैं। दान दाताओं ने लोक और परलोक के यश के लिये सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन के लिये कई बार बड़ी बड़ी रक़में दान की हैं। चूंकि वेदों को समझनेवाले बहुत कम हैं, अतः साधारण आर्य्य समाजी सत्यार्थ-प्रकाश पाठ से ही अपनी धार्मिक पिपासा को शान्त करता है। इस प्रकार आर्य्य समाजियों के दैनिक व्यवहार से पता चलता है कि सत्यार्थ-प्रकाश उनका धर्म-ग्रन्थ है। अपौरुषेय न सही फिर भी आर्य-ग्रन्थ है।"

धार्मिक विचार से हज़रत मुहम्मद साहब के कथन तथा कर्म को 'हदीस' (حديث) कहा जाता है। हदीसों के अनेक संग्रह हैं। उनको मुसलमान लोग धार्मिक ग्रन्थ मानते हैं। अनेक धार्मिक बातों की पुष्टि हदीसों पर ही निर्भर है। पाँच काल की निमाज की व्याख्या हदीसों से ही स्पष्ट है। मुसलमानों का एक समुदाय 'अहल हदीस' (اهل حديث) कहे जाने पर गौरव करता है।

'पुराना वाचा' (Old Testament) में स्तोत्र संहिता (Book of Psalms) व श्रेष्ठगीत (Song of Solomon) और 'नया समाचार' में पतरस की पहली पत्री (First Epistle of Peter) व यूहन्ना की पहली पत्री (First Epistle of John) आदि को ईसाई लोग धर्म-ग्रन्थ मानते हैं। निदान इस प्रकार की बातों के होते हुए मुसलमान व ईसाई क्योंकर कह सकते हैं कि सत्यार्थ-प्रकाश आर्यों का धार्मिक ग्रन्थ नहीं है।

सिन्ध प्रान्त में राजकीय कार्य चलाने के लिए ऐसा मन्त्रि-मण्डल बना जिसमें मुसलिम लीग के विचारों से सहमत होनेवाले मुसलमान मन्त्री अधिक रहे। उन्होंने पहले यह मत प्रकट किया कि सत्यार्थ प्रकाश ज़ब्त किया जाय किन्तु ८ जुलाई सन् १९४३ ई० को इस आशय की घोषणा की गई कि सिन्ध की सरकार सत्यार्थ प्रकाश के विषय में अपनी ओर से कोई कार्य न करेगी। ऐसी दशा में प्रतिष्ठित व प्राचीन मासिक पत्रिका 'सरस्वती' (इण्डियन प्रेस प्रयाग) के सम्पादक श्री पण्डित देवीदत्त शुक्लजी ने (आर्यसमाजी न होते हुए भी, बल्कि एक···होते हुए) यह लिखा :—

"* पाकिस्तानी अर्थात् मुस्लिमलीगी शासन की कैसी रूप-रेखा होगी इसका कुछ-कुछ पता उन प्रान्तों की शासन की गति-विधि से मिलने लगा है, जहाँ इस समय मुस्लिमलीगी मंत्रि-मंडल सरकारी सहायता से फल-फूल रहे हैं। इस सम्बन्ध में सिंध की लीगी सरकार अधिक साहस से काम ले रही है और हाल में सत्यार्थ-प्रकाश के सिन्धी अनुवाद पर प्रतिबन्ध लगाने का साहस दिखलाकर उसने अपनी इस ईमानदारी का ही परिचय दिया है कि अपना पूर्ण प्रभुत्व हो जाने पर वह सम्प्रदायवाद को कहाँ तक महत्त्व देगी। यह सत्य है कि सम्प्रदायवादी 'सत्यार्थ-प्रकाश' के तेज को नहीं सह सकते हैं। परन्तु इसके साथ यह भी सत्य है कि उस महान् तेजस्वी पवित्र ग्रन्थ के आगे सम्प्रदायवाद भी नहीं ठहर सकता। यह पुनीत ग्रन्थ वर्तमान युग के उस महर्षि की रचना है, जो

---

* (सरस्वती—अगस्त १९४३ ई० पृ० ४१९)

एकमात्र सत्य का उपासक था और जिसके दयालु हृदय ने ईशवाणी का साक्षात्कार किया था। ऐसी पवित्र आत्मा की 'सत्यवाणी' के दबाने का जो प्रयत्न सिन्ध के मुस्लिमलीगी तथा अन्य लोग करने जा रहे हैं वह और कुछ नहीं, वस्तुतः उसका और भी अधिक व्यापक प्रचार करने का नया साधन जुटा रहे हैं, क्योंकि 'सत्य' को जब आज तक कोई भी महान् से महान् शक्ति नहीं दबा सकी तब सिन्ध की वर्तमान सरकार की क्या हस्ती है कि वह 'सत्यार्थ-प्रकाश का नाम शेष कर सके। उसे समझना चाहिए कि सत्यार्थ-प्रकाश की रचना उसके प्रणेता ने किसी धर्म की निन्दा करने तथा किसी धर्म के अनुयायियों के दिल को चोट पहुँचाने के लिए नहीं की थी, जैसा कि साधारण लेखक प्रायः किया करते हैं ; किन्तु उसकी रचना का एकमात्र उद्देश्य यह था कि लोग धर्मान्धता, मूढ़ता तथा मिथ्या विश्वास के बन्धन से मुक्त होकर सत्यमार्ग का ग्रहण करें। दुःख ही नहीं, बड़े परिताप की बात है कि आज का साम्प्रदायवाद इस सत्य की अवहेलना करने में ही अपना मङ्गल समझ रहा है।"

इसमें सन्देह नहीं कि ८ जुलाई सन् १९४३ ई० को सिन्ध सरकार की ओर से इस आशय की घोषणा हुई कि वह सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में कोई कार्रवाई नहीं करेगी ; परन्तु इसके पश्चात् भी सिन्ध सरकार वास्तव में चुप नहीं रही—इस पर अखिल भारतीय आर्य-(हिन्दू) धर्म सेवा संघ, बिरला लाइंस सबज़ी मंडी देहली के प्रधान मन्त्री श्री रमाशंकरजी त्रिपाठी का वक्तव्य सत्यार्थ-प्रकाश के प्रति इन शब्दों में प्रकाशित हुआ है :—

"* समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ है कि सिन्ध सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश को ग़ैर कानूनी घोषित करने का विचार अभी तक नहीं छोड़ा है। इस निश्चय से समस्त हिन्दू जाति की धार्मिक भावना को गहरी चोट लगी है। आर्य समाज वृहद् हिन्दू जाति का एक अंग है। सत्यार्थ-प्रकाश हमारा धार्मिक ग्रन्थ है और उस पर लगाई गयी रोक हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कठोर आघात होगा।

हम ज़ोरदार शब्दों में सिन्ध सरकार से ऐसी आज्ञा प्रचारित करने का विचार त्याग देने का आग्रह करते हैं। अन्यथा इसकी प्रतिक्रिया हुए बिना न रहेगी। सिन्ध के प्रत्येक हिन्दू के पास सत्यार्थ-प्रकाश के कम से कम १४वें समुल्लास की हस्तलिखित प्रतियाँ पहुँचाई जायँगी। सिन्ध सरकार अपना निश्चय बदल कर हिन्दुओं के इस बढ़ते हुए असन्तोष को दूर कर सकती है।

हम आर्य समाज, सनातन धर्म सभा एवं हिन्दू महासभा की देश-व्यापी प्रत्येक शाखा सभाओं से अपील करते हैं कि वे भी उक्त वाक्य का प्रस्ताव पास करके सिन्ध सरकार के पास भेजें।"

सन् १९४३ ई० के नवम्बर की १५ व १६ तारीखों को दिल्ली में मुस्लिमलीग के कौन्सिल की बैठकें हुईं। उस अवसर पर सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में जो प्रस्ताव हुआ उसके सम्बन्ध में अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने जो मत प्रकट किया है उनमें से केवल दैनिक 'आज' काशी के शब्द नीचे दिये जाते हैं—

* (सार्वदेशिक मासिक हिन्दी-पत्रिका दिल्ली, सितम्बर १९४३ ई० का पृष्ठ ३५४)

"* कौन्सिल ने एक प्रस्ताव सत्यार्थ-प्रकाश के विरुद्ध भी पास किया है जिसमें भारत सरकार से "जोर के साथ कहा गया है कि सत्यार्थ-प्रकाश के वे समुल्लास जिनमें धर्म प्रवर्त्तकों, खासकर इसलाम के पैगम्बरों के बारे में आपत्तिजनक और अपमानकर बातें हैं, तुरंत जब्त कर लिये जायँ।" हमें इसमें सन्देह है कि जिस आदेश का पालन सिन्ध की लीगी सरकार के किये न हो सका भारत सरकार बिना 'चूं-चरां' किये उसे शिरोधार्य कर लेगी; सत्यार्थ-प्रकाश देश के एक प्रमुख सम्प्रदाय के लिए कुरान जैसी ही पवित्र पुस्तक है। पढ़े-लिखे सनातनी हिन्दू भी उसे आदर की दृष्टि से देखते हैं। ७० साल की पुरानी हो जाने का गौरव भी उसे प्राप्त है। अगर कट्टर पन्थी मुसलमानों की इस मांग ने आन्दोलन का रूप लिया तो देश के साम्प्रदायिक वायुमण्डल को और बिगाड़ देनेवाले एक विवाद-सम्भवतः संघर्ष के भी उपस्थित हो जाने की आशंका है। अतः हम आशा करते हैं कि लीग के कर्णधार अब भी समझदारी से काम लेंगे।"

सन् १९४३ ई० में जून मास की किसी तारीख को सिंध में सत्यार्थ-प्रकाश के विरुद्ध आवाज़ उठी। उसके बाद आर्यसमाजियों का ध्यान विशेष रूप से सत्यार्थ-प्रकाश की ओर आकर्षित हुआ। सितम्बर की ४ तारीख से १० तक सत्यार्थ-प्रकाश सप्ताह बहुत धूमधाम के साथ सारे भारतमें मनाया गया। सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में अनेक लेख लिखे गये, अनेक व्याख्यान दिये गये और सत्यार्थ-प्रकाश के प्रचार के निमित्त बहुत कुछ धन भी व्यय किया गया। इत्यादि

---

* इस बात के जतलाने की विशेष आवश्यकता प्रतीत नहीं होती कि दैनिक 'आज' एक प्रतिष्ठित राष्ट्रीय हिन्दी पत्र है—महेशप्रसाद।

उक्त प्रकार की सारी बातें बहुत अच्छी हुईं, परन्तु ज्ञात रहे कि मुसलमानों के पत्रों में जो बातें सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में छप रही हैं अथवा कराची व हैदराबाद (सिन्ध) से मेरे पास जो पत्र आये हैं उन पर विचार करने से एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता प्रतीत होती है जिस के पठन-पाठन से सत्यार्थ-प्रकाश का महत्त्व बढ़े और विरोधियों की बातों पर पानी पड़ जाय। निदान इस प्रकार की बातों को सन्मुख रख कर सत्यार्थ प्रकाश के निमित्त एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता हिन्दी व अंग्रेजी में है जिसमें कम से कम निम्नलिखित विषय हों—

१—सत्यार्थ-प्रकाश के प्रथम व द्वितीय संस्करणों के विषय में विरोधी लोग जो आपत्तियाँ खड़ी करते हैं उनको सन्मुख रखते हुए दोनों संस्करणों के सम्बन्ध में यथोचित रूप से लिखा जाय।

२—केवल हिन्दी में ही सन् १९३८ ई० तक तीन लाख दो सौ सत्यार्थ-प्रकाश प्रकाशित हो चुके हैं। इस बात को मैं सन् १९३८ में ही लिख चुका हूँ। तब से अब तक केवल हिन्दी में जितने सत्यार्थ-प्रकाश छप चुके हैं उनका विवरण और दिया जाय।

३—जिन जिन भाषाओं में सत्यार्थ-प्रकाश का अनुवाद हुआ है उनमें से प्रत्येक के विषय में दिखलाया जाय कि अनुवाद कब हुआ, किसने किया, कहाँ छपा। साथ ही साथ प्रत्येक अनुवाद के संस्करणों आदि के विषय में यथासंभव लिखा जाय।

४—अनेक देशी व विदेशी विद्वानों की जो सम्मतियाँ सत्यार्थ-प्रकाश के विषय में मिलें, उनको एक साथ कुछ टिप्पणी सहित लिखा जाय।

५—सत्यार्थ-प्रकाश की रचना के समय तथा उसके निकटवर्ती पूर्व काल में सत्यधर्म के नाम पर भारत में जो द्वन्द्व मचा हुआ था उस पर प्रकाश डाला जाय।

६—सत्यार्थ-प्रकाश के पश्चात् अनेक लोगों ने आपत्तिजनक वाक्यों का जो अर्थ किया है, उन पर जो टीका व टिप्पणियां की हैं, और अनेक लोगों की विचार-धारा में जो परिवर्तन हुआ है उस पर भी प्रकाश डाला जाय।

७—अनेक समयों में सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध जो आन्दोलन हुए हैं और उनका जो फल हुआ है उनको समुचित रूप से दिखलाना चाहिये।

८—सत्यार्थ-प्रकाश के विरुद्ध जो पुस्तकें किसी भी भाषा में लिखी गई हैं उनका संग्रह कई स्थानों में किया जाय, नहीं तो किसी एक स्थान पर अवश्य हो। उनमें जो कुछ लिखा गया है उसके प्रभाव को दूर करने के लिये आवश्यकतानुसार हिन्दी या अन्य भाषाओं में छोटी-बड़ी पुस्तकें लिखी जायें।

९—सिंध में सत्यार्थ-प्रकाश के विरोध के पश्चात् तथा मुस्लिम लीगके प्रस्तावों पर अनेक पत्र-पत्रिकाओं आदि में सत्यार्थ-प्रकाश के हक़ में जो विचार प्रकाशित हुए हैं उनको पुस्तक रूप में (आवश्यक टीका-टिप्पणियों के साथ) एकत्र कर दिया जाय* और पत्र-पत्रिका का ठीक-ठीक उल्लेख

---

* जो कुछ पुस्तक रूप में किया जाय उसके मूल अंश को भी कहीं सुरक्षित रखना कुछ कम उपयोगी कार्य न होगा। —महेशप्रसाद।

हो अर्थात् पत्र-पत्रिका के विषय में प्रकाशन का स्थान, तारीख, भाषा और मासिक, पाक्षिक या दैनिक होने का उल्लेख रहे ।

१०—जिन जिन भाषाओं में सत्यार्थ-प्रकाश छप चुका है उनमें से प्रत्येक भाषा के सत्यार्थ-प्रकाश किसी न किसी संस्करण का संग्रह अजमेर, दिल्ली, लाहौर, बम्बई, कलकत्ता, गुरुकुल कांगड़ी ऐसे स्थानों में रहना चाहिये ।

मैं भली भाँति जानता हूँ कि उक्त सारे विषयों पर कोई भी अकेले यथोचित रूप से नहीं लिख सकता । ऐसी अवस्था में आवश्यकता है कि भिन्न २ विषयों पर लोग पृथक् २ लिखें । हाँ, ऐसा ग्रन्थ बहुत जल्द तैयार भी नहीं हो सकता । ऐसी दशा में एक एक विषय पर पृथक् २ ट्रैक्ट या पुस्तक यथासम्भव जल्द तैयार कराकर प्रकाशित कराई जाएँ । बाद को सब ट्रैक्टों तथा पुस्तकों को मिला कर ग्रन्थ का पूरा रूप दे दिया जाय। श्रीमती परोपकारिणी सभा, अजमेर पर श्रीस्वामी-जी से सम्बन्ध रखने वाले ग्रन्थों की जिम्मेदारी बहुत ज्यादा है । उसका यह एक परम कर्तव्य होना चाहिये कि इस कार्य को अति शीघ्र अपने हाथ में ले अथवा श्रीमती सार्वदेशिक सभा दिल्ली या किसी अन्य सभा को चाहिये कि इस कार्य को अपनाये । यथा संभव थोड़ी बहुत सहायता ग्रन्थ की तैयारी में मैं भी करूँगा । उक्त प्रकार का ग्रन्थ निस्सन्देह इस समय में तो उपयोगी ही होगा और भविष्य में भी आग लगने पर कुआँ खोदने की आवश्यकता न पड़ेगी ।

कौन नहीं जानता कि वर्त्तमान समय में सत्यार्थ-प्रकाश के संबन्ध में जो वादा विवाद है वह वास्तव में चौदहवें समुल्लास की बाबत मुसल-

मानों की ओर से हैं। फलतः ग्रन्थकर्त्ता ने स्वयं सत्यार्थ-प्रकाश व चौद-हवें समुल्लास के विषय में जो कुछ कहा वह भी ध्यान देने योग्य है:—
"मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय, किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है। इसलिये वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता, इसीलिये विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें। पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।

मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जाननेवाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है; परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है, किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।" (सत्यार्थ-प्रकाश की भूमिका)

चौदहवें समुल्लास को आरम्भ करने से पूर्व उसकी अनुभूमिका में स्पष्ट शब्दों में कहा है:—

"यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य के निर्णय के लिये सब मतों के विषयों का थोड़ा-थोड़ा ज्ञान होवे इससे मनुष्यों को परस्पर विचार करने का समय मिले और एक दूसरे के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठ मूठ बुराई वा भलाई लगाने का प्रयोजन है। किन्तु जो जो भलाई है वही भलाई है और जो बुराई है वही बुराई सबको विदित होवे। न कोई किसी पर झूठ चला सके और न कोई सत्य को रोक सके और सत्यासत्य विषय प्रकाशित किये पर भी जिसकी इच्छा हो वह न माने वा माने। किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता और यही सज्जनों की रीति है कि अपने वा पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर गुणों को ग्रहण और दोषों का त्याग करें और हठियों का हठ, दुराग्रह न्यून करें करावें क्योंकि पक्षपात से क्या-क्या अनर्थ जगत् में न हुए और न होते हैं।"

(शिवरात्रि, २००० वै०)

(अँगरेजी)

The Immortal Satyarth Prakash

महर्षि दयानन्द सरस्वती, महर्षि दयानन्द कहां और कब, स्वामी दयानन्द और क़ुरान, गाय और क़ुरान, बक़र ईद, अमर सत्यार्थ-प्रकाश, सत्यार्थ-प्रकाश की व्यापकता, सर्व साधारण के लिये बहुत उपयोगी हैं। The Immortal Satyarth Prakash केवल अंग्रेज़ी जाननेवालों के लिये बहुत काम की है।

शिवरात्रि, आर्य्य समाज स्थापना दिवस, रक्षाबन्धन, सत्यार्थ-प्रकाश दिवस, दीपावली आदि के अवसर पर कुछ पुस्तकें आर्य्य समाज के काम को विशेषरूप से सफल बना सकती हैं।

विद्यामन्दिर, मनोरंजक हिसाब, ज्ञानगुदड़ी, पुष्पांजलि बच्चों के लिये बहुत उपयोगी हैं।

समस्त पुस्तकें उपहार व पारितोषिक के लिये भी कुछ कम अच्छी नहीं हैं।

कुछ पुस्तकें बहुत कम रह गई हैं।

महसूल डाक मंगानेवालों को देना होगा।

पता :—मैनेजर,

आलिम फ़ाज़िल बुकडिपो,

११५, मुहतशिमगञ्ज, इलाहाबाद (U. P.)

मुद्रक—विश्वनाथप्रसाद, ज्ञानमण्डल यन्त्रालय, काशी। २२०१-२०००

प्रकाशक—आलिम फाज़िल बुकडिपो, ११५ मुहतशिमगंज, इलाहाबाद।